॥ ओ३म् ॥

आर्यप्रेमी का विशेषांक

वर्ण विभेद-मीमांसा
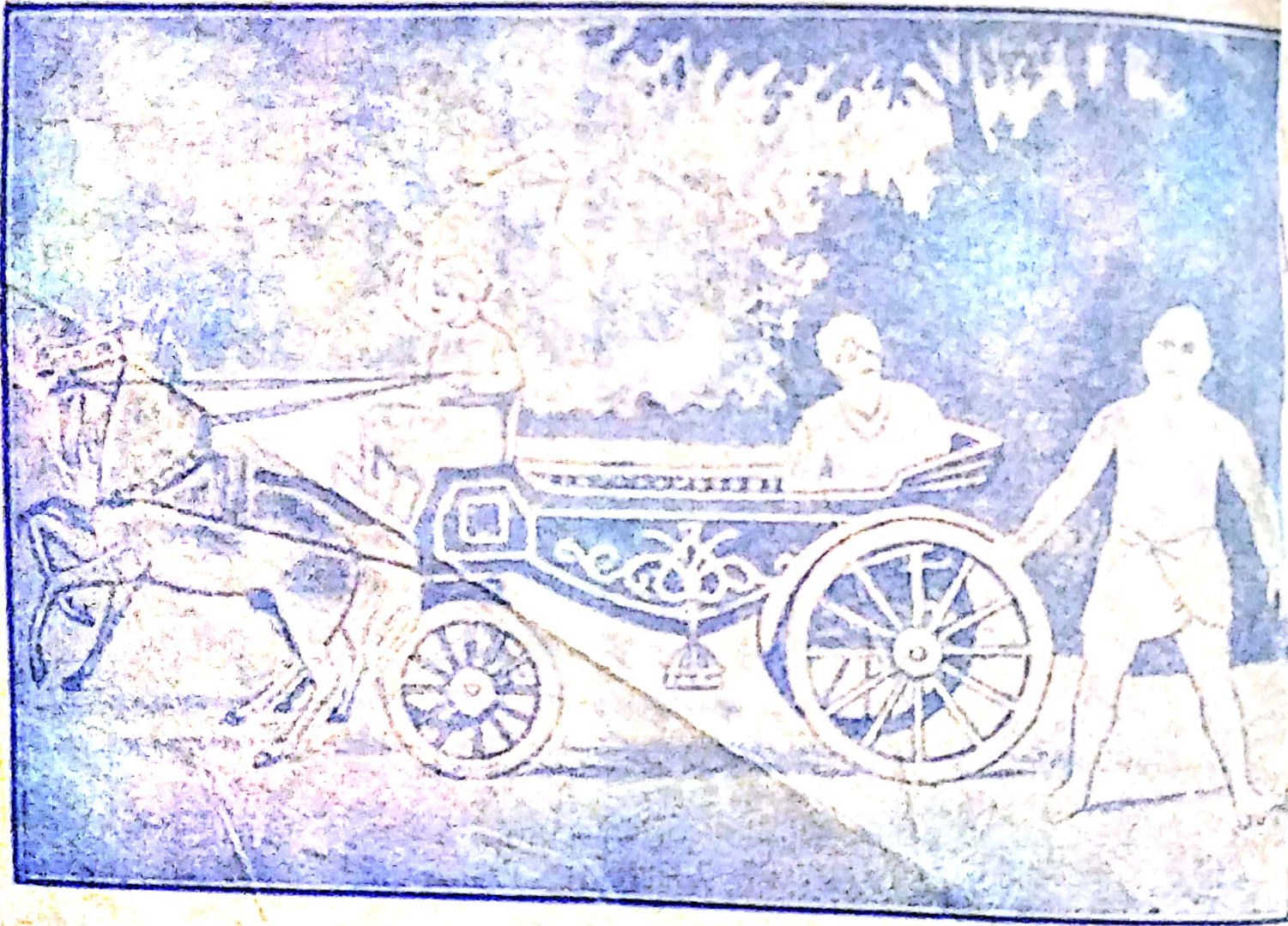
आदित्य ब्रह्मचारी महान् योगी, महान् क्रान्तिकारी, महान् गौभक्त महान् युग-प्रवर्तक, जगत्गुरु महर्षि स्वामी दयानन्द जिनका निर्वाणोत्सव दीपावली के शुभ पर्व पर सारी दुनियाँ खुशी एवम् उल्लास के साथ मना रही है।

समर्पण

यह लघु पुस्तिका मैं हिन्दु राष्ट्र के उन तरुण उदीयमान् युवक बन्धुओं के सुदृढ़ करों में समर्पित करता हूं जिनके ऊपर कल भारत राष्ट्र की उन्नति का भार है, जो वेद और महर्षि दयानन्दजी के आदेश "कृण्वन्तु विश्वमार्यम्"—समस्त भू-खण्ड को आर्य (श्रेष्ठ आचारवान्) बनाओ। एवं पूज्य–पद प्राप्त राष्ट्र पिता महात्मा गांधी जी के स्वप्न कि भारत में रामराज्य (सर्वसुखद राज्य) हो–के आदेश पालन में तथा उसके निर्माण में कटिबद्ध हैं मैं आशा करता हूँ कि यह पुस्तक उनको मार्ग दर्शन कराने में समर्थ होगी। जगन्नियन्ता उन्हें शक्ति से सम्पन्न करे कि वे वेद और युगपुरुषों की आज्ञा पालन में सक्षम हों।

चैत्र शुक्लपक्ष राम-जन्म-नवमी
गुरुवार सम्वत् २०२६ वि. क्र.

तरूण बन्धुओं का शुभ चिन्तक
राम. आर्यमुसाफिर

आचार्य धर्मधर आर्य
आर्य वीर दल मुम्बई
सम्पर्क - 9029421718

ईश्वर करे आप सदा स्वस्थ रहें

भाइयो आपके दिल ने पुकारा-मैं सेवा के लिये उपस्थित हूं

आजकल सबसे बड़ा धर्म है स्वस्थ रहना

स्वस्थ होगे---राष्ट्र की सेवा कर सकोगे—स्वस्थ होगे तो शत्रु का खुले दिल से मुंहतोड़ सामना कर सकोगे—स्वस्थ होगे तो व्यापार व धन्धे में प्रगति कर सकोगे। स्वस्थ होगे तो सदा चुस्त व स्फूर्त रह सकोगे। स्वस्थ होगे तो घर में बच्चों को सदा प्रिय लगते रहोगे। स्वस्थ होगे तो आप गृहस्थ जीवन सदा आनन्द से व्यतीत कर सकोगे। स्वस्थ होगे तो आप सुखी रह सकोगे एवम् अन्य को भी सुखी रख सकोगे, अतः प्रिय भाइयो, कहता सदा हूं कि मुझ से मिलें भाई समझकर मिलें—मित्र समझकर मिलें–अपने दुःख का वर्णन करें–मैं आपको पूर्ण विश्वास दिलाता हूँ कि मैं सदा आपको अपना समझकर दिल व जान से सेवा करूंगा–मेरे प्रिय प्रभु ने जो मुझ पर कृपा की है जो ज्ञान विधाता ने मुझे प्रदान किया है उस ज्ञान से उस अनुभव से आपके सब दुःख दूर करके बलवान् बनाऊं, निरोग बनाऊं जिससे आप सदा सुखी व कुशल रहें। सदा आपके मुखड़े गुलाब के फूल की भांति चमकते रहें। यही मेरी हार्दिक इच्छा है।

हमारी दवाइयों का ४० दिन का कोर्स जिसमें चार दवाइयां खाने की और दो मालिश की हैं इनका मूल्य २५) रू० है।

स्पेशल कोर्स एक माह के लिए ५०) रू०

महान् स्पेशल कोर्स २० दिन का १००) रू०

आपकी तबियत के मुताबिक स्पेशल दवाइयां तैयार करके दी जाती हैं।

वैद्य मोहनलाल सुपुत्र हकीम बीरूमल आर्यप्रेमी

आर्यन फार्मेसी, आर्यप्रेमी भवन नला बाजार, अजमेर

आज ही मुफ्त मंगाकर पढ़ें ब्रह्मचर्य पत्रक

वर्ण-विभेद-मीमांसा

रामायण तथा प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ महाभारतादि पढ़ने वाले विद्वान् यह भलि प्रकार से जानते हैं कि जब सारा संसार घोर अविद्यान्धकार में लीन था, आर्य जाति उस समय भी उन्नति के शिखर पर आरूढ़ थी, भू-गर्व विशारदों की यत्र तत्र खुदाई से भी इस बात की पुष्टि में अनेक प्रमाण मिले हैं। राष्ट्रकवि स्वर्गीय मैथिलीशरण जी गुप्त ने ठीक ही कहा है—यथा

शैशव-दशा में देश प्रायः जिस समय सब व्याप्त थे,
निःशेष विषयों में तभी हम प्रौढ़ता को प्राप्त थे।
संसार को पहले हमी ने ज्ञान-भिक्षा दान की.
आचार की, व्यापार की, व्यवहार की, विज्ञान[1] की

संसार में समाज शास्त्र के आदि प्रवर्तक महर्षि मनु महाराज ने भी अपने धर्मशास्त्र मनुस्मृति में वर्णन किया है कि "इस देश भारत में उत्पन्न हुए ब्राह्मणों के संसर्ग से समस्त भू-मण्डल के मनुष्यों ने अपने अपने धर्म और कर्त्तव्य की शिक्षा प्राप्त की ।।

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः ।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वं मानवाः । मनु. अ. २।२०

आधुनिक भारत के उद्धारक उन्नीसवीं शताब्दि के परम तपस्वी महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के दशम समुल्लास के अन्त में लिखा है कि "महाराज युधिष्ठिर के राज-

---

१–२० फरवरी १८८४ के डेली "ट्रब्यून" नामक पत्र में ब्राउन (D. O. Broun) साहब ने स्वीकार किया है कि "यदि हम पक्षपात रहित होकर भली भांति परीक्षा करें तो हमको स्वीकार करना पड़ेगा कि हिन्दू ही सारे संसार के साहित्य, धर्म और सभ्यता के जन्मदाता हैं ।"

सूय यज्ञ में भू-गोल के राजा महर्षि, महर्षि, आये थे, एक ही पाकशाला में भोजन किया करते थे, जब से ईसाई, मुसलमान आदि के मत मतान्तर चले आपस में बैर-विरोध हुआ उन्होंने मद्यपान, गोमांसादि का खाना पीना स्वीकार किया उसी समय से भोजनादि में बखेड़ा होगया।

आगे और देखिये महर्षि लिखते हैं कि–"देखो काबुल, कंधार, ईरान अमेरिका, यूरोप आदि देशों के राजाओं की कन्या गान्धारी, माद्री, उलोपी आदि के साथ आर्यावर्त्तदेशीय राजा लोग विवाह आदि व्यवहार करते थे, शकुनि (ईरान का निवासी था) आदि कौरव पाण्डवों के साथ खाते पीते थे, कुछ विरोध नहीं करते थे।

क्योंकि उस समय सर्व भूगोल में वेदोक्त एक मत था उसी में सब की निष्ठा थी और एक दूसरे का सुख दुःख हानि लाभ आपस में अपने समान समझते थे तभी भूगोल में सुख था।

पाठक महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के उक्त उद्धरणों से भली प्रकार समझ गये होंगे कि खान, पान की विभिन्नता के क्या कारण हुए। अब थोड़ा दूसरों की ओर भी दृष्टिपात करें—

ईसाइयों में भेदभाव

ईसाइयों में धार्मिक दृष्टि से कई मत भेद हैं रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेण्ट ये दो तो प्रसिद्ध ही हैं, इन दोनों में यहां तक मत भेद है कि दोनों के पूजा स्थान भी एक नहीं, खान पान का तो होना ही क्या है फिर विदेशी गोरे पादरी हिन्दुस्तानी ईसाइयों के साथ एक मेज पर बैठ कर भोजन नहीं करते हैं, अमेरिका जो भारत की निर्धन जनता को धन का लोभ देकर उनका धर्म छीन रहा है अपने ही देश मे पढ़े लिखे शिक्षित व्यक्तियों को जो निग्रो कहाते हैं, केवल रंग भेद के कारण समानता के अधिकार से वञ्चित करता है,

रातदिन वहां आये दिन तानाधिकार की प्राप्ति के हेतु रक्त बहाने के समाचार पढ़ने को मिलते रहते हैं।

मुसलमानों में भेदभाव

मुसलमान भाइयों में मजहबी दृष्टि से ७३ फिर्के (मतभेद) हैं सुन्नी, स्याह, राफजी, अहले कुरान, कादियानी इत्यादी इनकी भी ईसाइयों जैसी दशा है, मस्जिदें अलग हैं, साथ ही खान पान में भी बड़े भेद हैं, लेख का कलेवर बढ़ जाने के भय से हमने संकेत ही किया है विस्तार जानने के इच्छुक भाई अपने पड़ौसी मुसलमान भाइयों से बात चीत करके सत्यता की खोज कर सकते हैं।

भेद्भाव रहित युग

पाठकों को अब मैं सतगुग में चलने का निमंत्रण देता हूं, वे सत्य ब्रती महाराज हरिश्चन्द्रजी के इतिहास पर दृष्टिपात करें, महाराज सत्यधर्म की रक्षार्थ अपने को काशी के श्वपचर (भंगी) कलुआ के हाथ विक्री कराते हैं उसकी सेवा में प्रसन्न हैं, पाठक सोचें हरिश्चन्द्रजी की भोजन व्यवस्था क्या होगी कलुआ ने ही उसका प्रबन्ध किया होगा, इस आख्यान से पता चलता है कि सतयुग में अस्पृश्यता (छूत छात) नहीं थी उस समय दास वर्ग से लेकर विद्वान ब्राह्मणों तक का भोजन एक ही था। अन्यथा राजा हरिश्चन्द्र भंगी के हाथ न विकते।

भेदभाव रहित त्रेतायुग

अब त्रेतायुग में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्रजी के जीवन वृत पर दृष्टिपात करें, आज जितने भी ग्रन्थों में भगवान राम की चर्चा मिलती है वे सब ग्रन्थ इस बात के साक्षी हैं कि महाराज राम ने तत्कालीन निर्धन, एवं पिछडी हुई जंगली जातियों के साथ खान पानादि का समस्त व्यवहार किया था।

वन जाते समय जब श्री रामचन्द्रजी भाई लक्ष्मण और सीता सहित शृङ्गवेरपुर के समीप पहुंच जाते हैं और रात हो जाती है तब निषाद राज गुह को खबर मिलती है तो वह भगवान राम के पास सकुटुम्ब अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थ लेकर जाता है, गोस्वामी तुलसी दासजी के शब्दों में पढ़िये—यथा—

यह सुधि गुह निषाद जब पाई। मुदित लिए प्रिय बन्धु बुलाई॥
लिए फल मूल भेंट भरि भारा, मिलन चलेउ हियँ हरषु अपारा।
करि दण्डवत भेंट धरि आगे। प्रभुहि विलोकत अति अनुरागे।
सहज, सनेह बिवश रघुराई। पूँछी कुसल निकट बैठाई॥

उपरोक्त चौपाइयों से मैं यह निष्कर्ष निकालता हूं कि त्रेतायुग में निषादजी की जंगली जाति थी उसका भी एक समृद्ध राज्य था जिसका नाम शृङ्गवेरपुर था, दूसरा निष्कर्ष यह है कि त्रेतायुग में जंगली जातियों के साथ खान पान के सम्बन्ध में कोई भेदभाव न था तीसरा निष्कर्ष यह है कि अस्पृश्यता का भी सर्वथा अभाव था, ऐसा सब इसलिये था कि त्रेतायुग में वेदमत का सर्वत्र प्रचार था लोग वेद मार्ग के पथिक थे, यही बात शबरी जो जाति की भीलनी थी उसके सम्बन्ध में भी कही जाती है, भगवान रामने उसके दिये खाद्य पदार्थ कन्द, मूल, फलादि बड़े प्रेम से खाये थे और शीतल जलका जो शबरी लाई थी पान किया था।

भेदभाव रहित द्वापरयुग

द्वापर में भी हम हिडिम्बा राक्षस कन्या से भीम का विवाह श्री कृष्ण भगवान का नाग जाति से सम्पर्क, वीर शिरोमणि अर्जुन के विवाह आदि के वृत्तान्त इस विषय के द्योतक तथा प्रबल समर्थक हैं, कि जबतक समस्त भूमण्डल में आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा यहां कोई अस्पृश्य तथा अछूत न समझा जाता था।

महाभारत के युद्ध के पश्चात् आर्यों का सैनिक, धार्मिक तथा सामाजिक संगठन नष्ट होगया, परस्पर फूट, घृणा के बीजों का वमन हुआ विदेशी धर्मान्ध लुटेरों ने आर्यों को फूट से लाभ उठाया और उन्होंने आक्रमण प्रारम्भ किये जिससे विशाल संसार का सुखद-आर्य साम्राज्य नष्ट प्रायः होगया।

महाभारत से पता चलता है कि भूमण्डल में यत्र तत्र जो माण्डलिक राजा थे वे सब भारत की राज्यसत्ता से शाशित होते थे, कोई भी विदेशी आंख तक न उठा सकता था वह सदैव इस देश के शासकों की कृपा दृष्टि का इच्छुक था।

भेदभाव रहित वैदिक युग

अब मैं पाठकों की जानकारी के हेतु ऋग्वेद जो संसार के पुस्तकालय में पुस्तक रूप से सबसे पहली पुस्तक हैं, उसका प्रमाण उपस्थित करता हुआ पाठकों से आशा करता हूँ कि वे वेदादि धर्म ग्रन्थों की गहराई पर गम्भीरता से विचार कर देश और जाति के उत्थान में बाधक जो छूतछात अर्थात् अस्पृश्यता है उसके समूल निराकरण में कटिबद्ध होंगे।

मनुष्यमात्र एक समान हैं

ओं—अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधुः—सौभगाय। युवापिता स्वया रूद्र एषां सुदुघापृश्नि; सुदिना मरूद्भ्ज्ञः। ऋग्वेद ५। ६०। ५

शब्दार्थ—अज्येष्ठासः—जिनमें कोई बड़ा नहीं है और अकनिस्ठासः जिनमें कोई छोटा नहीं है। ऐसे एते ये सब। भ्रातरः—भाई एक जैसे हैं। ये सब सौभगाय उत्तम ऐश्वर्य के लिये। संवावृधुः—मिलकर उन्नति का प्रयत्न करते हैं, इन सबका युवा पिता—तरुणपितास्वपारुद्रः—उत्तम कर्म करने वाला ईश्वर है।

एषां—इनके लिये। सु-दुघा—उत्तम प्रकार का दूध देने वाली माता (पृश्निः) प्रकृति है यह प्रकृति-माता। मरूद्भ्य;—न रोकनेवाले जीवों के लिए सुदिना—उत्तम दिन प्रदान करती है।

पाठक? देख सकते हैं कि मन्त्र मेंस्पष्ट वर्णन है कि मनुष्य समाज में न कोई वड़ा है न कोई छोटा। सब भाई के समान हैं, सबकी समानता का कैसा सुन्दर बोध है। प्रभु के शासन में छोटा बड़ा कोई भी नहीं है।

ये सब भाई मिलकर उन्नति के हेतु प्रयत्न करें। यहां ध्वनि से यह भी अर्थ प्रतिपादित होता है कि यदि मिलकर पुरुषार्थ करेंगे तो निश्चित रूप से उन्नत हो सकेंगे। यदि परस्पर लड़ेंगे तो अवनत दशा को प्राप्त होंगे, सबका पिता वह ईश्वर ही है जो सबके वास्ते उत्तम कार्य करता है। प्रकृति माता द्वारा सब जीवों को भोग प्राप्त होते हैं। जो रोने धोने में समय नहीं खोते परन्तु जो भिन्न २ पुरुषार्थों में अपना समय लगाते हैं; उनके लिये सुदिन अर्थात् उत्तम समय सदैव ही रहता है। परन्तु जो मूर्ख लोग अपना समय शोक, मोहादि उन्नति विनाशक कर्मों में व्यय करते हैं; वे बुरी दशा में चले जाते हैं, उनके वास्ते सब समय कु-दिन बन जाता है, अतः सबको आपस में भ्रातृभाव से ही चलना चाहिये। और देखिये—

ओम्—ते अज्येष्ठा अकनिष्ठास उद्भिदोऽमध्यमासो महसा वि वावृधुः। सुजातासो जनुषा पृश्निमातरो दिवो मर्या आनो अच्छा जिगातन। ऋ० ५। ५९। ६

शब्दार्थ—ते-वे सब। अज्येष्ठाः—बड़े नहीं हैं।

अ-कनिष्ठासः—छोटे नहीं हैं। और अ-मध्यमासः–उदय को प्राप्त करने वाले हैं; इसलिये महता-उत्साह के साथ। वि–विशेष रीति से। वावृधु।–बढ़ने का प्रयत्न करते हैं। जनुषा–जन्म से वे। सुजातासः–उत्तम कुलीन हैं। और पृश्निमातरः– भूमि को माता मानने वाले

अर्थात् जन्मभूमि के उपासक हैं। इसलिये ये दिव:मर्त्या—दिव्य मनुष्य। नः अच्छा हमारे पास अच्छी प्रकार। आ-जिगातन—आवें।

नोट—इसमन्त्र में मनुष्य मात्र की समानता का कैसा भव्य वर्णन है। और कितना स्पष्ट है कि प्रभु की इस सृष्टि में कोई बड़ा है न कोई छोटा है और न मध्यम है। ईश्वर को अपना पिता और भूमि को अपनी माता मानकर उत्साह के साथ प्रत्येक व्यक्ति उन्नति के क्षेत्र में बढ़े।

चारों वेदों में उपरोक्त आशय के अनेक मन्त्र हैं।

चार वर्णों का विभाजन

प्रायः वैदिक संस्कृति को भली प्रकार न समझने वाले विरोधी कहा करते हैं कि किसी को परमात्मा ने ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र बनाया यह पक्षपात नहीं है—क्या ? वेद यदि परमेश्वर की वाणी है तो उसमें पक्षपात क्यों है ? इसके उत्तर में हम कहेंगे कि चारों वर्णों का विभाजन अत्यन्त मनोवैज्ञानिक आधार पर है। जो जाति राष्ट्र और मानव समाज की उन्नति के हेतु आवश्यक है। यदि ऐसा विभाजन न हो तो किसी प्रकार की भी उन्नति होना एवं मनुष्य जीवन का जो परम कर्त्तव्य सांसारिक उन्नति के साथ पारलौकिक उन्नति भी है वह सर्वथा असंभव प्रायः हो जायगी; अस्तु यजुर्वेद में वर्णविभाजन का अलंकारिक वर्णन देखिये—

ओम्—ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहूराजन्यः कृतः, उरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याᳪ शूद्रोऽअजायत ॥ यजु० ३१ मं० ११

शब्दार्थ—ब्राह्मणः—ब्राह्मण। अस्य-इस विराट राष्ट्ररूप समाज का। मुखं आसीत्—मुखस्थानीय है। राजन्यः—क्षत्रिय। बाहूकृतः—बाहू के समान है। यत्वैश्यः—जो वैश्य वर्ग है तद् अस्य उरू—वह राष्ट्र पुरुष के मध्य देह के तुल्य हैं। और शूद्रः—सेवक वर्ग। पद्भ्यां अजायत

पैरों के समान हैं, अर्थात् समस्त शिल्पवर्ग राष्ट्रोन्नति का आधार स्तम्भ मन्त्र में अलंकारिक रूप से चारों वर्णों के कर्मों का निरूपण है। शूद्र को इस मन्त्र में बहुत ऊंचा पद दिया गया है। जिस प्रकार समस्त शरीर पैरों के आश्रित रहता है। उसी प्रकार यह समस्त मनुष्य समाज शूद्र अर्थात अत्यन्त परिश्रमीजनों के आश्रित है। वेद के शब्दों में मानव समाज की उन्नति का मूलाधार श्रमप्रधान वर्ग अर्थात् शिल्पीवर्ग है, आज संसार के जो देश उन्नति के शिखरारूढ़ हैं उसका एकमात्र कारण उद्योगों का होना है, अमेरिका, जापान, रूस, आदि देश इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

पौराणिक समय में परिश्रम करने वाले लोगों से घृणा की गई फलतः भारत अधोगति को प्राप्त हुआ। यजुर्वेद अध्याय ३० के ५ वें मन्त्र में "तपसेशूद्रम्" शब्द आया है, जिसका अर्थ है तप-कठोरकर्म करने में समर्थ (शूद्रम्) शूद्र कहलाता है।

पाठक चारों वेदों में ऐसे अनेक मन्त्र प्राप्त कर सकते हैं; जिनमें शूद्र वर्ग के लोगों को यज्ञ-उत्तमकर्म करने तथा उनका आदर सत्कार करने की आज्ञा ब्राह्मणादि वर्णों को दी गई है।

वेद अभाव में कपोल कल्पित ग्रन्थों के प्रचार से चारों वर्णों का संगठन नष्ट हो गया। फलतः देश और जाति पर विदेशियों ने भरपूर आक्रमण करके भारत राष्ट्र के सर्वस्व का अपहरण किया।

इस अवसर पर हमें सर्वतोमुखी सुधारक प्रातस्मरणीय महर्षि दयानन्द सरस्वतीजी महाराज का महान् धन्यवाद कर ऋणि होना चाहिये कि उन्होंने भारत राष्ट्र और आर्य जाति को उसका प्राचीन गौरव स्मरण करा पुनः स्वराज्य प्राप्ति के हेतु अनेक प्रकार की प्रेरणायें देकर अग्रसर किया। जिसे पूज्य महात्मा गांधी जी के नेतृत्व में हमने प्राप्त किया।

अब पाठक कुछ और प्रमाण भी देखें

जन्मना जायते शूद्राः संस्कारात्द्विज उच्यते। अर्थात्—ऋषि कहते हैं कि जन्म से तो सभी मनुष्य शूद्र संज्ञक हैं किन्तु उत्तरोत्तर संस्कारों से ब्राह्मणादि वर्णों को प्राप्त होते हैं। यहां शूद्र का अर्थ संस्कार विहीन व्यक्ति ही होता है, मनुष्य जैसे २ विद्या, बलादि गुणों को प्राप्त कर संस्कृत होता जायेगा वैसे ही वह उच्च वर्णों को प्राप्त होता जायेगा। इसी भाव को संसार में समाज शास्त्रों के आदि प्रणेता महर्षि मनु कितने सुन्दर शब्दों में दर्शाते हैं यथा—

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चोतिशूद्रताम् ।
क्षत्रियाज्जात मेवंतु विद्याद्वैश्यात्तथैवच ॥

मनु० अ० १० श्लो० ६५

अर्थात्—शूद्र ब्राह्मण हो जाता है और ब्राह्मण शूद्र हो जाता है, इसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य को भी जानना चाहिये (ये दोनों वर्ण भी उच्चता और नीचता को प्राप्त होते हैं)

उपरोक्त श्लोक में स्पष्ट वर्ण-परिवर्तन की घोषणा की है।

एक आवश्यक प्रश्न

यहां एक आवश्यक प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जब ऐसी व्यवस्था थी तब इतनी पूछताछ जितनी कि वर्तमान में दृष्टिगोचर होती है, क्यों ? वृद्धि को प्राप्त हुई। इस प्रश्न का कुछ उत्तर तो मैं प्रारम्भ में पाठकों के सन्मुख रख चुका हूं। अब यहां सप्रमाण तथा युक्तियुक्त कुछ स्पष्टीकरण आवश्यक जान पाठकों की सेवा में निवेदन करता हूं—यथा—

वर्ण भेद के कारण

शनकैस्तुक्रियालोपादिमाः क्षत्रिय जातयः ।
वृषलत्वंगता लोके ब्राह्मण दर्शने न च ॥

मनु० अ० १० श्लो० ४३

अर्थ—ये क्षत्रिय जातियां (उपनयन-यज्ञोपवीत) आदि संस्कारों के लोप होने से और यजन, याजन, अध्यापन आदि से शून्य ब्राह्मणों को न देखने से अर्थात्—वेदज्ञब्राह्मणों के सम्पर्क न रहने से धीरे २ नीचपन को प्राप्त हो गईं।

कौन २ जातियाँ गिरी

पौण्ड्रकाश्चौड्र द्रविडाः काम्बोजायवनाःशकाः।
पारदा पह्लवाश्चीनाः किराता दरदाः खशाः।

मनु १० श्लो. ४४

उपरोक्त श्लोक में मनुजी ने पौण्ड्रक, ओड्र, द्राविड, काम्बोज, यवन, शक, पारद, पह्लव, चीन, किरात, दरद खश १२ देशों के निवासियों को क्रिया के लोप होने अर्थात् संस्कार च्युत होने से पतित संज्ञा दी है। क्या हम नहीं जानते कि आर्यसमाज के जन्म से पूर्व कोई भी ब्राह्मणादि वर्ण का व्यक्ति निकृष्ट कर्म कर बैठता था तो उसे जाति बहिष्कृत कर दिया जाता था। पुनः वह अपना एक दल बना कर जीवन यापन करता था, मुसलमान और ईसाइयों की बढ़ती जन संख्या इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

विदेशी लुटेरे जब हमारे देश की समृद्धि का ज्ञान प्राप्त करते थे तो उसे लूटने, तबाह करने को आक्रमण करते थे, महमूद की लूट तो इतिहास प्रसिद्ध है ही। फलतः जो बिचारे जीवन रक्षार्थ यत्र तत्र भटकते हुए अभक्ष पदार्थ खा बैठते थे, उन्हें जाति च्युत कर दिया जाता था, जाति का पठित समुदाय "आपत्ति काले मर्यादानास्ति" अर्थात्-विपत्ति के समय सम्पूर्ण मर्यादायें (नियमादि) प्रायः मान्य नहीं हुआ करती इस सुनहरी नियम को धार्मिक नेता भूल चुके थे।

इसी से पाँचवां वर्ण अन्त्यज (अधमजाति, नीच जाति) पैदा हुआ। जिनका आचार विचार रहन सहन और खान पान सबही गिरा हुआ (द्विजातियों से भिन्न) हो गया।

उदाहरण के वास्ते आज उन भाइयों की ओर दृष्टि डालिये जो बागड़िये कहलाते हैं जिनका समस्त परिवार गाड़ियों में भ्रमण करता है और यत्र तत्र लोहे के कृषि-यन्त्रों का निर्माण करता हुआ जीवन यापन करता है, ये राजपूताने के वे वीर क्षत्रिय जाति के रणबांकुरे सपूत हैं जिन्होंने ४०० वर्ष तक जंगलों में भटक भटक कर जीवन रक्षा की किन्तु यवन बादशाहों की अधीनता स्वीकार नहीं की जिन्हें स्वराज्य प्राप्ति पर स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री पं० जवाहरलाल जी नेहरू तथा राजस्थान सरकार के प्रतिनिधियों ने ६ अप्रेल सन् १९५५ को चित्तौडगढ़ में मकान बनवा कर और बसा कर उनकी प्रतिज्ञा पूर्ण कराई थी।

चारों वर्णों का खानपान

हमारे चारों वर्णों का खानपान यदि देखा जावे तो आज भी ग्रामों में एक है, विवाह आदि के अवसरों पर चारों वर्ण एक पंगत में बैठकर भोजन करते हैं। ब्राह्मणादि अपने पात्र शूद्रों को देते हैं।

परन्तु जबसे गोहत्यारे इस देश में गोमांस भक्षण करने वाले हुए तबसे ही छूत-छात बहुत बढ़ी है मेगास्थनीज, ह्यूनसांग, फाहियान आदि विदेशी यात्रियों ने इस बात को स्वीकार किया है कि यहाँ के निवासी किसी प्रकार का भी मांस नहीं खाते थे, और द्वि जाति वर्ग तो प्याज तक भी नहीं खाते थे क्योंकि वह सभ्य समाज का खाद्य नहीं था। स्थानाभाव के कारण हम सम्प्रति प्रमाण देने में असमर्थ हैं।

समय समय पर हमारे देश के नेता विद्वान् ब्राह्मणों ने इस ओर ध्यान दिया कि जो किसी कारणवश जाति च्युत होगया है उसे प्रायश्चितादि संस्कारों के द्वारा शुद्ध करके पुनः जाति-गङ्गा में सम्मिलित कियाजावे, अस्तु वेद जो ईश्वरीय ज्ञान का भण्डार है उसने अपने पुत्रों की भूलों का प्रायश्चित आदेश दिया है जिसके कुछ मंत्र पाठकों की सेवा में प्रस्तुत हैं। यथा—

ओम्–पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसाधिया ।
पुनन्तु विश्वाभूतानि, जातवेदः पुनीहिमाम् ।।
अथर्व. ६।११।१

भावार्थ–प्रायश्चित्त का इच्छुक व्यक्ति जाति के विद्वान् नेताओं के पास जाकर कहता है कि हे विद्वान् लोगो आप मुझ धर्मच्युत व्यक्ति को पवित्र करें। मुझे मन बुध्दि और कर्म से पवित्रता प्रदान करें। सम्पूर्ण स्त्री पुरुष मुझे पवित्र करें। हे ज्ञानी आचार्य आप सबके सामने मुझे पवित्र कीजिये।

एक मंत्र और देखिये

ओम्–यदि दिवा यदि नक्तम् एनाꣳसि चकृमा वयम् । वायुर्मा तस्मादेनसो, विश्वान्मुञ्चत्वꣳहसः ।

अर्थात्–यदि दिन में यदि रात्रि में हमने पाप किये हैं तो सर्वत्र गतिमान वायु रूप परमेश्वर अथवा ज्ञान स्वरूप विद्वान् आचार्य हमें पवित्रता प्रदान करें। इत्यादि अनेक मंत्र इस प्रसंग के अथर्ववेद में हैं, पुस्तक का कलेवर बढ़जाने के भय से दिग्दर्शन मात्र कराया गया है।

प्रायश्चित्त के सम्बन्ध में पुराण तथा स्मृति ग्रन्थ भी देखने योग्य हैं।

जब जब हमारे देश और जाति पर घोर संकट आये हैं, और विदेशियों द्वारा आक्रमण किये गये हैं एवं बलात् आर्य जाति को धर्म भ्रष्ट किया गया है तो समय आने पर तात्कालिक विद्वानों ने वेदमंत्रों के आधार पर सर्व जन उपयोगी नवीन साहित्यनिर्माण कर प्रायश्चित्त का विधान किया है। जो न केवल अपनी ही जाति के पतितों का उद्धारक है, वरन् आर्य (वैदिक) सभ्यता से प्रभावित दूसरे लोगों को भी पवित्र करके आर्यजाति में स्थान देनेवाला है यथा—

सरस्वत्याज्ञया कꣳवोमिश्रदेश मुपाययो ।
म्लेच्छान् संस्कृत्य चा भाष्य तदा दश सहस्रकान् ।।
भविष्यपुराण, प्रति वर्ग पर्व खं. ४ अ. २१

भावार्थ—वेदविद्या की प्रेरणा से प्रेरित महर्षि कण्व मिश्र देश में गये, वहाँ के दश सहस्र म्लेच्छ निवासियों को वैदिक संस्कारों से दीक्षित करके ब्रह्मावर्त में लाये तथा सबको कर्मानुसार ब्राह्मणादि वर्णो में शामिल कर दिया।

कहाजाता है कि मिश्र कहलाने वाले ब्राह्मण मिश्र देशवासी ही हैं, जिन्होंने अपना देशवासी नाम अपने नाम के साथ लगा रक्खा है। इसी प्रकार गौड़ देशवासी गौड़ ब्राह्मण और कान्यकुब्ज, सारस्वत आदि भी समझने चाहिये।

आज भी हम देखते हैं कि लोगों ने देशवासी या प्रान्तवासी नाम अपने नामों के साथ जोड़ रक्खे हैं, जिनसे स्पष्ट पता चलता है क यह कौन है, जैसे पंजाबी, बंगाली, गुजराती, सिन्धी, आदि। इनको प्रान्तों में रहते ५०।१०० तथा इससे भी अधिक वर्ष हो गये हैं पीढ़ियाँ गुजरती जा रही हैं मगर आज भी वे पंजाबी पंजाबी ही हैं।

श्रमवर्गियों में जाति विभाजन

हमारे विशाल देश में जहाँ ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य (व्यापारीवर्ग) बहुत बड़ी संख्या में हैं वहाँ श्रम-वर्ग भी बहुतायत से हैं। एक समय था जब चारों वर्ण एक थे एक रहन, सहन व खानपान, और भाषा व्यवहार भी एक थे, विवाह आदि संस्कारों की पद्धति भी एक ही थी आज भी ग्रामों में चारों वर्ण के लोग जन्मोत्सव आदि विद्वान् ब्राह्मणों से पूछ कर ही करते हैं, ब्राह्मणों को भोजन कराते हैं, सीधा देते हैं तात्पर्य यह कि कहीं भी भेद भाव या ऊँच नीच का नाम नहीं है, किन्तु अविद्या के प्रसार ने श्रम वर्ग में विभिन्नता उत्पन्न की, और पेशों के आधार पर जातियों का निर्माण हुआ जो अत्यन्त गलत आधार था जैसे-लुहार लोहे का काम करने वाला, कुम्हार-मिट्टी का काम करनेवाला, सुतार-लकड़ी का काम करनेवाला, सुनार सोने का काम करने वाला, जुलाहा-कपड़ा बुनने वाला, दर्जी-कपड़े सीने वाला, धोबी-कपड़े धोने वाला, चमार-चमड़े का काम करने वाला।

वेदाधिकार भी है।

इत्येते चतुरो वर्णाः येषाम्ब्राह्मी सरस्वती ।
विहिता ब्राह्मणापूर्वं लोभाच्चाज्ञानतां गताः ॥ ८ ॥

अर्थ—इन चारों वर्णों के लिए ही ब्राह्मी सरस्वती (वेदवाणी) परमात्मा ने प्रदान की है परन्तु ये लोभवश हो अज्ञानी बन गये।

उपरोक्त श्लोक महाभारत शान्तिपर्व अ० १८८ के हैं। इनसे पता चलता है कि चारों वर्णों में कितनी समानता है।

सबका खान-पान भी एक था।

ओम्—समानी प्रवा सहवोऽन्नभागः स माने यीक्त्रे सहवोयुनज्मि। अथर्व का. ३ सूक्त ३० मं. ६

भावार्थ—आप सबका पान (पीना, जलस्थान) समान-एक ही हो और आपका भोजन भी एक जैसा ही हो। मैं तुम्हें एक जुए में जोड़ता हूँ।

पाठक मन्त्र के शब्दों की गहराई पर गम्भीर विचार करें जिस प्रकार गाड़ी में जुते हुए बैल, घोड़े आदि साथ २ चलकर ही लक्ष्य पर पहुंचते हैं यदि वे आगे पीछे होकर जोर लगावें तो जुआ टूट जायेगा ठीक इसी प्रकार चारों वर्ण के मनुष्य जो ज्ञान, बल, धन, और सुश्रूषा के प्रतीक हैं मिलकर चलेंगे तो अभ्युदय को प्राप्त होंगे, अन्यथा पतनावस्था को तो निश्चय ही प्राप्त होंगे, मनुष्य का शरीर भी उत्तम उदाहरण है शिर ज्ञान प्रदान इन्द्रीयों का केन्द्र है जो ब्राह्मण स्थानीय है, भुजायें बल प्रधान क्षत्रिय स्थानीय इत्यादि समझने चाहिये, पैर शूद्र स्थानीय जो समस्त शरीर को उठाये हैं और क्रिया शील बनाये हुए हैं।

वेद के अतिरिक्त महाभारत में यत्रतत्र शूद्र रसोई बनाने वाले थे यथा—अश्वमेधपर्व अ० ८५ में लिखा है कि विविधाश्च पालानि पुरुषायेऽनुयायिनः—

अर्थात्—विविध प्रकार के भोजन शूद्र आदि संकर जाति के लोग तीनों वर्णों के यहां बनाते थे। और सब लोग खाते थे।

महाराज दशरथजी के यज्ञ में ब्राह्मण, शूद्र, तपस्वी और सन्यासी वृद्ध, रोगी, स्त्री, और बालक सब इच्छा पूर्वक भोजन करते थे। भोजन के समय अनेक देशों से आये हुए ब्रह्मणादि लोग सुन्दर स्वादु भोजनों की प्रशंसा करते थे और "हम तृप्त हुए हैं आपका कल्याण हो" इस प्रकार राजा का यज्ञ गान करते थे, और बहुत से सुवेशधारी रसोइये ब्राह्मणों के आगे अन्न परोसते थे।

ब्राह्मणा भुञ्जते नित्यं नाथवन्तश्चभुञ्जते
तापसाः भुञ्जते चापि श्रमणाश्चैव भुञ्जते ॥ १ ॥

वृद्धाश्च व्याधिताश्चैव स्त्रीबालाः तथैव च।
नाना देशा दनुप्राप्ताः पुरुषा स्त्री गणास्तथा ॥ २ ॥

अन्नपानैः सुविहिताः तस्मिन् यज्ञे महात्मनः।
अन्नं हि विधिवत्स्वादु प्रशंसन्ति द्विजर्षभाः ॥ ३ ॥

अहो ? "तृप्तास्मभद्रन्ते" इति शुश्राव राघवः।
स्व लङ्कृताश्च पुरुषा ब्राह्मणान् पर्य्यवेष्टयन् ॥ ४ ॥

बाल्मीकी रामा: उत्तर कां० सर्ग० १

उक्त श्लोकों का सार ऊपर दिया जा चुका है।

भोजन क्या होता था वह भी देखिये।

बहुत से पाठक कहेंगे कि पूरी परांवठा तो सभी का खाया जा सकता है, किन्तु यहां क्या भोजन था उसे पाठक देखें श्री रामचन्द्रजी लक्ष्मणजी को आज्ञा देते हैं कि—

शतंवाह सहस्राणां तण्डुलानां वपुष्मताम्।
अयुतंतिल मुद्गस्य प्रयात्वग्रे महाबल ? ॥ १ ॥

चणकानां कुलत्थानां माषाणां लवणस्यच ।
अतोऽनु रूपं स्नेहं च गन्ध संक्षिप्तमेवच ।। २ ।।

अर्थात्—हे महाबली लक्ष्मण ? बड़े हृस्ट पुस्ट एक लाख बैलों की गाड़ी में चावल भरकर वहां भेज दीजिये दशहजार गाड़ी तिल और मूंग की भर कर अभी वहां भिजवा दीजिये। और इसके अनुसार चना, कुलत्थ (दाल) उड़द, नमक तदनुसार घी तथा सुगन्वित द्रव्य वहां भिजवाइये। जहां अश्वमेध यज्ञ के पश्चात भोजन हो रहा है। आगे इसमें चटनी आदि सभी भोजन से सम्बन्धित पदार्थों का वर्णन है। स्थाना भाव के कारण हम उसका वर्णन छोड़ते हैं। जिसे आज-कल कच्चा भोजन कहा जाता है, यह वह था।

खान पान पर इतना बल क्यों ?

प्रश्न होता है कि खान पान पर जितना बल हिन्दु धर्म में है उतना ईसाई, मुसलमान आदि में नहीं है. ऐसा क्यों ? इसके उत्तर में हम कहना चाहते हैं कि खान में जोर तो उनके यहां भी है जैसा कि पूर्व हमने कुछ संकेत किया है, किन्तु हिन्दुओं में विशेष है सो—

इसका उत्तर पाठकों को विस्तारभय के कारण संक्षेप में ही देना सम्भव है, आशा है उससे सन्तुष्टि होगी।

हिन्दु (आर्य) धर्म सांसारिक अभ्युदय के साथ पारलौकिक उन्नति की ओर भी मनुष्य को अग्रसर करता है जबकि दूसरे धर्मों (मजहबों) में इसके लिये कोई स्थान नहीं है, वैदिक ऋषि कहते हैं कि आहार शुद्धौ सत्व शुद्धिः सत्व शुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः ।

अर्थात्—जिस मनुष्य का भोजन शुद्ध है उसका चित्त, मन भी शुद्ध होगा और चित्त शुद्धि से ही सत्य ज्ञान प्राप्त होता है ।

दवाखानों में डाक्टर एक मरीज को देखने के बाद हाथ धोता है सो क्यों ? पाठक विचार करें

भोजन शुद्धि, विचार शुद्धि, बुद्धि शुद्धि आदि के कारण ही हिन्दू जाति में स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी, तपस्वी अरविन्द, आदि संसार शिरोमणी मानवों ने जन्म लिया है जितने महापुरुष, एवं भक्त, तपस्विनी, मातायें धर्मवीर बालक बालिकायें हिन्दूजाति में उत्पन्न हुए हैं उतने दूसरे किसी जाति वा किसी देश में नहीं, गहराई से विचार करें तो इसका कारण भारतवासी हिन्दुओं का आहार, विहार और आचार आदि ही इसमें प्रमुख कारण प्राप्त होगा अस्तु इसलिये पदे पदे हिन्दु (आर्य) धर्म में शुद्ध खान पानादि का वर्णन किया गया है. किसी के प्रति घृणादि के कारण नहीं ऐसा समझना भूल है कि हिन्दु या हिन्दू (आर्य) धर्म किसी से घृणा करता है ।

श्री जगतगुरु शंकराचार्य जी और अस्पृश्यता

आजकल पुरी के जगदगुरु श्री स्वामी शंकराचार्य जी महाराज के पटना द्वितीय विश्व हिन्दुधर्म के सम्मेलन में हुए २९ मार्च के भाषण पर एक बड़ा अरुचिकर बादविवाद खड़ा हो गया है यद्यपि श्री स्वामी जी ने लोगों को रोका टिप्पणी पर अपने भाषण का स्पष्टिकरण भी कर दिया है कि स्पृश्य और घृणा इसमें बड़ा भेद है जो सदैव रहने वाला हमारा बच्चा जो अबोध है वही फिर तो हुई दशा में अस्पश्य है, हमारी स्त्री रजस्यलाहिदशा मे अस्पृश्य है हमारा बांया हाथ शोच-क्रिया करते हुए अश्यपृश्य है किन्तु घृणा योग्य नहीं है, यह स्पष्टि-करण उचित ही है और यह सदैव रहने वाला है मनुष्य तथा उसके शरीर वयव दिन में अनेक बार अस्पश्त (न छूने योग्य) होते हैं परन्तु घृणा योग्य नहीं जिससे घृणा होती है उसे तो दूर किया जाता है, अस्तु स्वामीजी के स्पष्टिकरण से विवाद समाप्त हो जाना चाहिये था किन्तु राजनीति के अखाड़ेवाजों को चैन कहां ।

कोई उन्हें जेल में बन्द करने की मांग कर रहा है तो कोई मुकद्दमा चलाने की तो कोई गद्दी से उतार देने की बात कर रहा है इत्यादि देखें ऊँट किस करवट बैठता है ।

हां ? इतना तो हम जरूर कहेंगे कि स्वामीजी का भाषण समयोचित नहीं है, इस समय जबकि चारों ओर से हिन्दुत्व को मिटाने का हेतु प्रबल प्रयत्न किये जा रहे हैं अपनों की ओर से तो क्रमबद्ध योजनायें ही चल रही है कि शीघ्र से शीघ्र हिन्दु समाप्त कर दिये जावे, इन योजनाओ की पूर्ति के लिये लाखों, करोड़ों रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा है किन्तु दिन्दु समाज के नेता अभी तक भी हाथ पर हाथ धरे बैठे हैं और किंकर्त्तव्य विमूढ़ हैं तो फिर--

अब हम क्या करें ?

प्रश्न स्वभाविक है कि वर्तमान कठिन परिस्थिति में हिन्दु क्या करें, हमारी सम्मति में इस समय प्रबल हिन्दु-संगठन का कार्य होना चाहिये, हिन्दुओं के पास पुराण तथा स्मृतिग्रन्थ ऐसे अभेद्य कवच हैं जो हिन्दु जाति की रक्षा करने में सहायक हैं, हमारा प्रचार कार्य संगठित रूप से हो और धर्म, संस्कृति तथा जातिरक्षा को लक्ष करके हो, अपने धर्म के उत्कृष्ट आदर्श सर्व साधारण के सन्मुख प्रस्तुत किये जावें, साथ ही पतितोद्धार का कार्य विशाल पैमाने पर हो, छुआछूत (अस्पृश्यता) का सर्वथा नाश हो सर्वसाधारण इसके सत्यार्थ को समझे ऐसा प्रयत्न हो। हिन्दुओं में जो अनेक राजनीतिक दल हैं वे समाप्त हों केवल एक ही राजनीतिक दल हो हिन्दु-सभा राजनीति क्षेत्र का कार्य छोड़ धार्मिक कार्य को तथा हिन्दुमात्र के संगठन का ही कार्य अपनावे। ध्यान रहे कि हिन्दुमात्र का संगठन होने एवं उनका सांस्कृतिक उत्थान होने से राजनीति का प्रश्न स्वतः ही हल हो जायेगा।

अस्पृश्यता कैसे मिटे

आजकल देश में सर्वत्र "गांधीशताब्दि" मनाने की धूम मची हुई है। हमारी सरकार अस्पृश्यता मिटाने पर बड़ा बल दे रही है जहां तक अस्पृश्यता का सम्बन्ध है यह निश्चित है कि जब तक अस्पृश्य

रहेंगे उनसे स्पर्श–सम्पर्क में परहेज रहेगा ही । अस्पृश्यता निरोधी कानून बनाकर शासन और समाज निष्क्रय हो गया । कानूनों से यदि समाज चिन्तन और व्यवहार सुधर जाया करते, तो समाज सुधारकों, विचारकों आदि की व्यर्थता कभी की सिद्ध हो चुकी होती । ईश्वर भी आकर छुआछूत को मानने के लिए कहे तो हम इसे नहीं मानेंगे ऐसा कहने के वजाय युग का तकाजा यह है कि आकृति, वेषभूषा, बातचीत, चालढाल से ही जाना जा सकता है कि अमुक व्यक्ति अस्पृश्य है वा स्पृश्य, शरीर-श्रम का अपना पेशा करने के अलावा, जब किसी अस्पृश्य को इस रूप में पहिचाना न जा सकेगा, तब छूआछूत रोग स्वतः निर्मूल हो चुकेगा । गन्दा होने पर मनुष्य को स्वयं अपने आपसे ऊब होने लगती है, परायों से परहेज होना तो दूर की बात है । गांधी-शताब्दी वर्ष में राष्ट्रपिता के नाम पर दुकानदारी चलाने वाले यदि अस्पृश्यों को स्वच्छता की शिक्षा देते, गन्दगी से दूर रहने का बीड़ा उठा लेवें तो इससे बढ़कर श्रद्धांजलि उस महात्मा के प्रति क्या हो सकती है ? अस्पृश्यों की बस्तियाँ भारत मही के शरीर पर कलंक के दाग हैं । उनके कच्चे मकान (क्या उन्हें मकान, कहा जा सकता है ?) उनके फटे मैले, चिथड़े जिन्हें 'कपड़े' कहने में भी संकोच होता है. उनमें निरक्षरता, शराब आदि दोष व बुराइयाँ, और सबसे बढ़कर आत्महीनता का उनका भाव, ये और ऐसी ही अनेक बातें हैं जो उनकी पशुसम ज़िन्दगी से लिपटी पड़ी हैं और आध्यात्मिक हिन्दुत्व और भारतीय तत्व ज्ञान का क्रूर उपहास कर रही है, आज ही नहीं सदियों से ।

अस्पृश्यों की भारत स्वतन्त्र होने पर आर्थिक स्थिति काफी अच्छी होती जा रही है । पर वे अपनी अस्पृश्यता से छुटकारा पाने का उद्यम करने के बजाय उससे चिपके रहना ही चाहते हैं क्योंकि इससे उनको अनेक राजनैतिक और सामाजिक लाभ मिलते हैं ।

यह मनोवृत्ति उनकी अपनी घोर शत्रु है ।

बिजनौर का अस्पृश्यता निवार का आन्दोलन

इंगलिस्तान के प्रधान मन्त्री मि० रेम्जेमेकडानल्ड ने अछूतों (हरिजनो) को हिन्दुओं से पृथक करने का फैसला किया था तो इस फैसले के विरुद्ध स्वर्गीय राष्ट्रपिता गांधीजी ने आमरण भूख हड़ताल करके इसका प्रबल विरोध किया था, समस्त भारत में अछूतोद्धार की प्रबल लहर चली थी, बिजनौर में भी आर्यसमाज के नेता स्वर्गीय श्री ला० ठाकुरदासजी जो वैदिक विचारों के साथ प्रमुख गांधी भक्तों की श्रेणी में थे और प्रसिद्ध कांग्रेसी भी तथा श्री बा० जगन्नाथ शरणजी वकील आदि के नेतृत्व में वह महान् कार्य हुआ था कि जिसे महात्मा गांधीजी ने जब देखा तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए उन्होंने स्पष्ट कहा था कि मेरे कार्य से यह कहीं ऊँचा है, इन पंक्तियों का लेखक भी सक्रीय उक्त महानुभावों के साथ भागीदार था ।

हमारा प्रोग्राम था १ महीना १ ग्राम में लगाकर चर्मकार भाइयों को रहन, सहन, खान, पान, गृहव्यवस्था की ट्रेनिंग देना, जब तक वे परिपक्व और पूर्ण अभ्यासी हो जाते थे तब विशाल पैमाने पर सहभोज (साथ मिलकर खान, पान) करते थे, भोजन बनाने परोसने आदि में वे सक्रीय सहयोगी रहते थे, उस समय मुसलमान भाइयों तथा अदूरदर्शी हिन्दुओं की ओर से कतिपय बाधायें डाली गई आठ अभियोग चले जिनमें अंग्रेज सरकार की अदालतों से सर्वत्र आर्यसमाज को विजय श्री प्राप्त हुई थी, यह समय सन् १९२७ व २८ ई० का था। हमने जहाँ विरोधियों की अड़चनों क अदालतों द्वारा जवाब दिया वहाँ हिन्दु, मुसलमान भाइयों को भजनों, उपदेशों तथा अछूतोद्धार सम्बन्धी छोटी २ पुस्तिकाऐं प्रकाशित कराकर उनके हृदयों को भी जीता था हमारे इस प्रचार का यह फल हुआ कि कुछ काल पश्चात् विरोधी हिन्दु-मुसलमान भाई भी हमारे कार्य का समर्थन करने लगे थे, फलतः अछूतोद्धार (हरिजनोद्धार) में बिजनौर का जिला सबसे

आगे था और आज भी वहाँ के हरिजन वर्ग की दशा कहीं उत्तम है यद्यपि कांग्रेस की पृथकतावादी नीति से हरिजनों में वे भावनायें नहीं रही हैं जो आर्यसमाज के उद्धार समय जनसाधारण में उत्पन्न की गई थी।

राजस्थान के हृदय अजमेर में दलितोद्धार का कार्य

आर्य जगत् के प्रसिद्ध नेता कर्मवीर श्री पं० जियालालजी के नेतृत्व में कई सहभोज आनासागर झील के तट पर हुए थे जिनमें सवर्ण और हरिजन तीन हजार से लेकर ५, ६ हजार की संख्या तक ने एक साथ मिलकर खान पान कर छूतछात का उन्मूलन किया था स्वर्गीय आर्य नेता ने कई मेहतर बालकों को विद्यादान दिलाकर उच्च बनाया था, इसी प्रकार दूसरे आर्य नेता राजस्थान केसरी कुं० देशभक्त श्री चाँदकरणजी ने भी यत्रतत्र शिक्षणालय, प्रचार और उक्त सहभोज आदिकों में भागलेकर हिन्दु जाति के मस्तक से छूत अछूत के कलंक को मिटाया था, समस्त भारत में—ऋषि दयानन्द के मिशनरियों ने हरिजन उद्धार में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की थी और आज भी कर रहे हैं।

सम्प्रति अस्पृश्यता मिटाने के लिये निम्न सुझाव उपयोगी हैं।

१—सरकार का समाज कल्याण विभाग तथा भारत सेवक समाज ऐसे लोगों के हाथों में दिया जावे जिनके जीवन का उद्देश्य ही अस्पृश्यता निवारण हो।

२—खान, पान की शुद्धता, रहन, सहन, वस्त्र और मकान तथा पात्रों की स्वच्छता इत्यादि का ज्ञान भली प्रकार कराया जावे।

३—आर्थिकदशा का भी उत्तम होना उपरोक्त कार्यों की पूर्त्यर्थ अत्यन्त आवश्यक है। इसके वास्ते सरकार तथा समाज सेवक,

देशका धनिक वर्ग सहायता प्रदान करे। क्योंकि धनाभाव के कारण पढ़ा लिखा विद्वान् और स्वच्छता प्रेमी ब्राह्मण भी मैले, फटे, पुराने वस्त्रों के कारण अस्पृश्य और घृणा योग्य समझा जाता है।

४—हरिजन उद्धार और अस्पृश्यता निवारण का कार्य सुचारू रूप से चलाने के हेतु आर्य समाज के नेताओं का सहयोग लेना चाहिये।

यदि सच पूछा जाये तो उक्त कार्य आर्यसमाज को ही सुपर्द कर देना चाहिये।

आशा है उपरोक्त सुझावों पर विचार और अमल करने पर अस्पृश्यता शब्द पुस्तकों में ही देखने को मिलेगा परन्तु व्यवहार में नहीं अन्त में निम्न प्रार्थना के साथ में इस लेख को समाप्त करता हूं।

सर्बेभवन्तु सुखिनः सर्वेसन्तु निरामयाः
सर्बेभद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःख भाग भवेत्

।। ओम् णम् ।।

वैदिक संगीत

अग्न आ याहि वीतयं गृणातो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि। सामदेव । ११

यज्ञ ही मेरे हृदय का, प्राण जीवन गीत है।
यज्ञ ही है ज्योति जग की, यज्ञ ही संगीत है।
यज्ञ ही है प्रेरणा का पुंज, दर्शक मार्ग का,
ज्ञानदाता, स्वार्थ नाशक, त्याग प्रेरक भाव का।।
दोह में वह शक्ति भगवन् यज्ञ हम करते रहें।
रात दिन तव गीत गाकर, पुण्य पथ बढ़ते रहें।
"अग्न" जागे वह हृदय में, पाप पथ दलते रहें।
तुम विराजो नाश मन में, भाव शुभ पलते रहें।
कामना है बस यही, प्रभु! ना तुझे मैं भूल जाऊं,
राह पर तेरे चलूं मैं, दीप्त हो कर जगमगाऊं।

—भारतेन्द्र नाथ

॥ ओ३म् ॥

आदरणीय बन्धु,

आशा करता हूँ कि ईश्वर की कृपा से आपका जीवन सुखमय, आनन्दमय, बलवान् और शक्तिवान् होगा।

ईश्वर न करे आप अपने जीवन में कमजोरी और निर्बलता का अनुभव करें। फिर भी अगर आप ऐसा अनुभव करते हैं तो हमें एक बार सेवा करने का सौभाग्य प्रदान करें।

हम परिपूर्ण परमात्मा की कृपा से आपको विश्वास दिलाते हैं कि हम आपका जीवन सुखमय और आनन्दमय बनाने में कोई कसर न उठा रखेंगे।

सच्चाई और पूर्ण विश्वास के साथ हमारी हार्दिक इच्छा रहेगी कि आप सदैव स्वस्थ, बलशाली तेजस्वी और शरीर से दिन दुगुनी और रात चौगुनी उन्नति करें और ईश्वर आपकी सहायता करें। हम आपकी सेवा भरसक करें, जिससे हमको हार्दिक प्रसन्नता मिलेगी।

मैं हूं आपका भाई—

वैद्य मोहनलाल सुपुत्र हकीम वीरूमल 'आर्यप्रेमी'

आर्यन फार्मेसी, आर्यप्रेमी भवन, नला बाजार, अजमेर।

मुद्रक—पण्डित भगवानस्वरूप न्यायभूषण, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर

प्रकाशक—वैद्य मोहनलाल, वीरूमल आर्य-प्रेमी, आर्यन फार्मेसी, आर्य-प्रेमी भवन, पो० बाक्स नम्बर २७ नला बाजार, अजमेर।